6

प्रस्थानत्रयी में स्मृति और न्याय प्रस्थान

प्रस्तावना

वेदान्त जिनमें प्रतिष्ठित हैं अथवा जिसके द्वारा प्रतिष्ठित हैं, वेदान्त सम्प्रदाय में श्रुति, स्मृति, न्याय रूप शास्त्र प्रस्थान कहलाते हैं। एवम् ब्रह्म बोधकों की शब्द प्रमाणों की वेदान्तों में जहाँ प्रतिष्ठा होती है, और जिसके द्वारा होती है, वही प्रस्थान है। ध्वन्यालोक ग्रन्थ में लोचनकार अभिनवगुप्तपाद द्वारा प्रस्थान शब्द का निर्वचन प्रदर्शित है यथा– ''प्रतिष्ठन्ते परम्परया व्यवहरन्ति येन मार्गेण तत्प्रस्थानम्।''

वेदान्त ही उपनिषद् कहलाते हैं, तो वेदान्त की श्रुति प्रतिष्ठा कैसे हो, स्वयं की स्वयं की प्रतिष्ठा होने के कारण कहा गया है– आत्म स्वरूप ब्रह्म के बोधक शब्द प्रमाण तत्वमसि इत्यादि वाक्य वेदान्त के शब्द वाच्य होते हैं। वे ही स्वयं परम प्रमाणभूत है, मन्दमति वालों की दृष्टि में प्रतिष्ठा युक्त नहीं हैं। उपनिषदों में ब्रह्म बोधक वाक्य, आख्यायिका, युक्ति, दृष्टान्त अर्थवादियों द्वारा एवं भिन्न-भिन्न प्रबोधन प्रक्रियायों द्वारा प्राप्त प्रतिष्ठाएँ हैं। उसके कारण वेदान्त उपनिषदों में प्रतिष्ठा को प्राप्त करते हैं, यह योजित है।

उपनिषद् सार संग्रह रूप गीता में, उपनिषद् वाक्यों में ही युक्ति युक्त विचार के लिए विरचित ब्रह्मसूत्र में वेदान्त की प्रतिष्ठा सुविदित ही है।

अथवा भाष्य, आख्यान वाद ग्रन्थ, प्रकरण ग्रन्थ आदि रूप वेदान्तशास्त्र की प्रतिष्ठा जहाँ है (जिसमें है), वह प्रस्थान है। श्रुति, स्मृति, न्याय में ही भाष्य आदि वेदान्त शास्त्र प्रतिष्ठित है।

उपनिषद्, गीता, ब्रह्मसूत्र रूप प्रस्थानत्रयी का ही सम्मिलित रूप ही अद्वैत वेदान्त शास्त्र है। प्रस्थानत्रयी ही आत्मस्वरूप निर्धारण में परम प्रमाणता को भजता है। इसमें वह न्याय प्रस्थान और स्मृति प्रस्थान ग्रन्थ की शरीर विवेचना आदि पर आगे विचार किया जाता है।

टिप्पणी

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे:

- न्याय प्रस्थान क्या है, इस विषय में ज्ञान प्राप्त करने में;
- न्याय प्रस्थान में किसको ग्रहण करना चाहिए, यह जान पाने में;
- ब्रह्मसूत्र में ब्रह्म क्या है, यह जान पाने में;
- आत्मस्वरूप का निर्धारण कैसे करना चाहिए, यह जान पाने में;
- इतर दर्शन के खण्डन के साथ अद्वैत वेदान्त शास्त्र की प्रतिष्ठा होती है, यह ज्ञान प्राप्त करने में;
- जगत की उत्पत्ति और लय किस कारण होती है, यह जान पाने में;
- ब्रह्म ही सत्य वस्तु है, ऐसा श्रुतियों द्वारा प्रतिपादित है वह जान पाने में;
- स्मृति प्रस्थान का परिचय प्राप्त कर पाने में;
- गीता के अनुसार किस प्रकार का कर्म करना चाहिए, यह जान पाने में;
- गीता के अनुसार श्रद्धा के भेदों को जान पाने में;
- तीनों गुणों के कार्य को जान पाने में;
- आत्म तत्व को जान पाने में;
- धर्म-अधर्म के विषयों का ज्ञान प्राप्त कर पाने में;
- संन्यास के स्वरूप को जानने में;
- गीता का सार जान पाने में;
- मोक्ष प्राप्ति के उपायों को जान पाने में;
- ब्रह्म के स्वरूप का निर्णय कर पाने में।

6.1 न्याय प्रस्थान

श्री बादरायण व्यास कृत ब्रह्मसूत्र ही वेदान्तशास्त्र का न्याय प्रस्थान है। शारीरिक अर्थात् जीवात्मा का जो स्वरूप उपनिषदों में श्रुत है वह यहाँ नित्य, शुत्र, बुद्ध, मुक्त स्वभाव ब्रह्म प्रस्थान में उपनिषद् वाक्य ही विषयीकृत करके विचार किया गया है। और भगवत्पूज्यपाद भाष्यकार द्वारा सूत्रभाष्य में कहा गया है- ''वेदान्तवाक्यकुसुमग्रथनार्थत्वात् सूत्रणाम्। वेदान्त वाक्यानि हि सूत्रैरूदाह्यत्य विचार्यन्ते''।।

(जन्माद्याधिकरण भाष्य में) ब्रह्मसूत्र के चार अध्याय हैं और वे अध्याय हैं-

1. समन्वय अध्याय
2. अविरोध अध्याय
3. साधन अध्याय
4. फल अध्याय

प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। और सम्पूर्ण ग्रन्थ के सोलह पाद हैं। प्रत्येक पाद में विषय के भेद से अधिकरण होते हैं। अधिकरण का लक्षण है-

''विषयों विषयश्चैव पूर्वपक्षस्तथोत्तरम्।
सन्नतिश्चेति पञ्चांन्न शास्त्रेऽधिकरणं स्मृतम्॥''

सभी को मिलाकर एक सौ पञ्चानवे (195) अधिकरण विद्यमान हैं। और सम्पूर्ण ग्रन्थ में पाँच सौ पञ्चानवे (555) सूत्र हैं।

6.1.1 अध्यायों का परिचय

ब्रह्मसूत्र के प्रथम अध्याय के प्रथम पाद में प्रसिद्ध विषय चतुः सूत्री है। उसमें चार सूत्रों की चर्चा की गई है। सूत्र का लक्षण है-

अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारद्विश्वतोमुखम्।
अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदुः॥

और वे चार सूत्र हैं-

- अथातो ब्रह्म जिज्ञासा।
- जन्माद्यस्य यतः।
- शास्त्रयोनित्वात्।
- तत्तु समन्वयात्।

इस सूत्र में 'ब्रह्म जिज्ञासा', यह अर्थ प्रतिपादित है। 'अथ' शब्द तो आनन्तयार्थ इस अर्थ में गृहीत है। 'अतः' शब्द हेतु अर्थ में गृहीत है। 'ब्रह्मजिज्ञासा', यहाँ ब्रह्म की जिज्ञासा है। 'ब्रह्मणः' यहाँ कर्मणि षष्ठी है, शेषे षष्ठी नहीं।

जन्माद्यस्य यतः, इस सूत्र में ब्रह्म का लक्षण प्रतिपादित है। लक्षण है- असाधारणधर्मवचनम्। ब्रह्म के दो लक्षण उक्त हैं-

- स्वरूप लक्षण- जो स्वरूप से व्यावर्तक है, स्वरूप लक्षण है। यथा -'सत्यं ज्ञानमन्तं ब्रह्म', 'विज्ञानमानन्दं ब्रह्म', 'सच्चिदानन्दं ब्रह्म'।

- तटस्थ लक्षण- जो लक्ष्य को काल द्वारा अनवस्थित करने पर जो व्यावर्तक है, वही तटस्थ लक्षण है। ब्रह्म का तटस्थ लक्षण है जगत् के जन्म-स्थिति-प्रलय का कारणत्व। इसी प्रकार श्रुति है ''यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति, यं प्रयन्त्यभिसंविशन्ति'' (तैत्तिरीयोपनिषद् 3.1.1)। यतः पद द्वारा कारण निर्देश होता है। जिस ब्रह्म से जगत की उत्पत्ति प्रदर्शित है। जगत् तो नाम-रूप से व्याकृत है।

''शास्त्रयोनित्वात्'' इत्यादि सूत्र द्वारा ब्रह्म का शास्त्रप्रमाणकत्व ज्ञात होता है। यहाँ योनि शब्द की भगवत भाष्यकार द्वारा दो प्रकार की व्याख्या प्रदर्शित है। यथा-

शास्त्र योनि अर्थात् प्रमाण है जिसमें उसका भाव शास्त्रयोनित्व है, इसीलिए शास्त्रयोनित्वात्। जैसे कहा गया है- ''यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति, यं प्रयन्त्यभिसंविशन्ति''। इसीलिए ब्रह्म का शास्त्र प्रमाणकत्व सिद्ध है।

शास्त्र का योनि अर्थात् कारण शास्त्रयोनित है, उसका भाव शास्त्रयोनित्व है, इसीलिए शास्त्रयोत्वात्। यथा श्रुति में ही कहा गया है- अस्य महतो भूतस्य निःश्वासितमेतद् यदृग्वेदः (बृहद् 4-5-11) इत्यादि। उस महान् भूत का निरतिशाय, सर्वज्ञत्व और सर्वशक्तिमत्व है।

'तत्तु समन्वयात्' इत्यादि सूत्र द्वारा मोक्ष का स्वरूप प्रतिपादित है। तत्तु समन्वयात्- इस सूत्र की व्याख्या करके भाष्यकार शंकराचार्य लिखते है- ''ब्रह्मभावश्च'' मोक्षः। अथवा नित्य-शुद्ध-बुद्ध-ब्रह्म स्वरूपवान् मोक्ष है। वह ब्रह्म सर्वज्ञ एवं सर्वशक्तिमान् है। ''ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति'' इत्यादि विधानों में यह आत्मा क्या है? मोक्ष क्या है? ब्रह्म क्या है? इन आकांक्षाओं में सभी वेदान्त उपयुक्त हैं। नित्य, सर्वज्ञ, सर्वगत, नित्यतृप्त, नित्य-शुद्ध-बुद्ध-मुक्त स्वभाव वाला विज्ञानमानन्द रूपी ब्रह्म है। यह ब्रह्म तो पारमार्थिक, कूटस्थनित्य, निरवयव, स्वयं ज्योति स्वभाव वाला है। वह यह अशरीरत्व ही मोक्ष को कहता है। जैसे उक्त है-

''अशरीरं शरीरेष्वनवस्थेष्ठस्थितम्।
महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति॥'' (कठ. 1/2/22)

और भी,

''भिद्यते ह्यदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन्दृष्टे परावरे॥''

और अन्य,

''तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुश्यतः।'' (ईश. 8)

अब सभी पादों के सार रूप अर्थ की क्रम से आलोचना की गई है-

इसमें आदि में पादों के नाम हैं-

समन्वयाध्याय	
प्रथम पाद	स्पष्टब्रह्मलिन्न श्रुति समन्वय
द्वितीय पाद	अस्पष्ट ब्रह्मलिन्न श्रुति समन्वय
तृतीय पाद	ज्ञेय ब्रह्म प्रतिपादक-अस्पष्ट श्रुति समन्वय
चतुर्थ पाद	अव्यक्त आदि सन्दिग्ध पदमात्र समन्वय

अविरोधाध्याय	
प्रथम पाद	वेदान्त समन्वय विरोध-परिहार
द्वितीय पाद	तर्कपाद
तृतीय पाद	वियत्पाद
चतुर्थ पाद	प्राणपादः

साधनाध्याय	
प्रथम पाद	वैराग्यनिरूपण
द्वितीय पाद	तत्व-पदार्थ परिशोधन
तृतीय पाद	परापर ब्रह्म विद्यागुण उपसंहार
चतुर्थ पाद	निर्गुण विद्या का अन्तरङ्ग साधन-विचार

फलाध्याय	
प्रथम पाद	आवृत्तिपाद
द्वितीय पाद	उत्क्रान्तिपाद
तृतीय पाद	मार्गपाद
चतुर्थ पाद	ब्रह्मपाद

6.1.2 समन्वय अध्याय

1. समन्वय अध्याय के प्रथम पाद में आदि के सूत्र चतुष्टय के द्वारा शास्त्रार्थ का संग्रह करके आचार्य द्वारा स्पष्ट ब्रह्मलिन्न श्रुतियों का समन्वय प्रदर्शित है।

टिप्पणी

2. द्वितीय पाद में तो उपास्य के वाचकों का स्पष्ट श्रुति समन्वय प्रदर्शित होता है।
3. तृतीय पाद में ज्ञेय ब्रह्म के प्रतिपादक स्पष्ट श्रुति समन्वय प्रदर्शित होता है।
4. चतुर्थ पाद में तो अव्यक्त आदि सन्दिग्ध पद मात्र का समन्वय प्रदर्शित है।

6.1.3 अविरोध अध्याय

1. अविरोध अध्याय के प्रथम पाद में साङ्ख्य आदि स्मृति और युक्ति द्वारा वेदान्त के समन्वय विरोध जो उद्भावित है, उसका परिहार किया गया है।
2. द्वितीय पाद में तर्कपाद की व्याख्या में वेदान्त के समन्वय के अविरोध के लिए सांख्य आदि मतों का दुष्टत्व दर्शित है।
3. तृतीय पाद में तो पञ्चमहाभूत और जीवात्मा में श्रुतियों के विरोध का परिहार है।
4. और चतुर्थ पाद में लिन्न शरीर सम्बन्धी श्रुतियों के विरोध का परिहार किया गया है।

6.1.4 साधन अध्याय

1. साधन अध्याय के प्रथम पाद में जीव की वैराग्य हेतु गत्यागति प्रदर्शित होती है।
2. द्वितीय पाद में उसका ही अवस्था भेद, प्रपञ्च, तत्व-पदार्थ परिशोधन किया गया है।
3. तृतीय पाद में ब्रह्म विद्याओं में गुणोपसंहार का प्रकार दर्शित होता है।
4. चतुर्थ पाद में परब्रह्मविद्या के अन्तरङ्ग, बहिरङ्ग, साधन विरचित हैं।

6.1.5 फल अध्याय-

1. फल अध्याय के प्रथम पाद में साधन आश्रित कुछ अवशिष्ट के वर्णन का ही जीवन-मुक्ति विचार किया गया है।
2. द्वितीय पाद में उत्क्रान्ति गति निरूपित है।
3. तृतीय पाद में सगुणविद्यावान् की मृत्यु का उत्तरमार्ग व्याख्यात है।
4. चतुर्थ पाद में ब्रह्म प्राप्ति और ब्रह्मलोक की स्थिति निरूपित है।

ब्रह्मसूत्र में बादरायण आचार्य द्वारा निर्दिष्ट आचार्य

आचार्यों के नाम	सूत्र
काष्र्णाजिनि	चरणादिति चेन्नोपलक्षणाथेति काष्र्णाजिनिः (ब्र.सू.31)
काशकृत्स्नाचार्य	अवस्थितेरिति काशकृत्सन (ब्र.सू. 1/4)
औडुलोमि	चितितन्मात्रेण तदात्मकत्वादित्यौडुलौमिः (ब्र.सू. 4/4)
बादरि	सुकृतदुष्कृते एवेति बादरिः (ब्र.सू. 3/1)
बादरायण	एवमप्युपन्यासात् पूर्वभावादविरोधं बादरायणः (ब्र.सू. 4/4)
जैमिनि	ब्राह्मेण जैमिनिरूपन्यासादिभ्यः (ब्र.सू. 4/4)
आश्मरथ्य	प्रतिज्ञासिद्धेर्लिन्नमाश्मरथ्यः (ब्र.सू. 1/4)

पाठगत प्रश्न 6.1

1. न्याय प्रस्थान द्वारा किसका ग्रहण होता है?
2. ब्रह्मसूत्र के रचनाकार कौन हैं?
3. ब्रह्मसूत्र में कितने अध्याय हैं?
4. ब्रह्मसूत्र में कितने अधिकरण हैं?
5. ब्रह्मसूत्र के द्वितीय अध्याय का क्या नाम है?
6. ब्रह्म का लक्षण किस सूत्र में प्रतिपादित है?
7. ब्रह्म भाव मोक्ष है अथवा ब्रह्म का अभाव मोक्ष है?
8. साधन अध्याय में प्रथम पाद में क्या प्रतिपादित है?
9. अशरीर मोक्ष है, उसमें श्रुति प्रमाण क्या है?
10. 'जन्माद्यस्य यतः' इसमें 'यतः' पद का अर्थ क्या है?
11. 'शास्त्र्योनित्वात्' इस सूत्र में दो प्रकार का विग्रह क्या है?
12. ब्रह्मजिज्ञासा, यहाँ विग्रह क्या है?
13. सूत्र का लक्षण क्या है?
14. अधिकरण का लक्षण है?
15. बादरायणाचार्य द्वारा ब्रह्मसूत्र में निर्दिष्ट आचार्यों में चार आचार्यों के नाम लिखिए।

टिप्पणी

16. उत्क्रान्ति गति कहाँ वर्णित है?
17. सांख्य आदि का दुष्टत्व किस पाद में निराकृत है?
18. ''अस्य महतो भूतस्य नि:श्वासितमेतद् यदृग्वेद'' कहाँ है?
19. ''प्रतिष्ठन्ते परम्परया व्यवहरन्ति येन मार्गेण तत्प्रस्थानम्'' यह उक्ति किसकी है?
20. तटस्थ लक्षण का क्या लक्षण है?
21. ''तत्तु समन्वयात्'' इस सूत्र में 'तत्' पद द्वारा किसका ग्रहण होता है?
22. 'वेदान्तवाक्यकुशुमग्रथजार्थत्वात् सूत्रणाम्। वेदान्तवाक्यानि हि सूत्रैरूदाह्यत्य विचार्यन्ते'' किसमें अथवा कहाँ है?
23. ब्रह्मसूत्र के द्वितीय अध्याय के तृतीय पाद का नाम क्या है?
24. ''अथातो ब्रह्मजिज्ञासा'' सूत्र का अर्थ क्या है?

6.2 स्मृति प्रस्थान

स्मृति प्रस्थान को गीता प्रस्थान कहते हैं। महाभारत के शान्तिपर्व में अन्तर्भूत श्रीमद्भगवद्गीता परम पुरूष वासुदेव द्वारा द्वापर में कुरूक्षेत्र में अर्जुन को समुपदिष्ट कृष्ण द्वैपायन व्यास द्वारा सात सौ श्लोकों द्वारा उपनिबद्ध है। श्रुति में प्रतिपादित अर्थ ही स्मृति प्रस्थान में आलोचित है। आध्यात्मिक भावना प्रधान गीता अद्वैत वेदान्त साहित्य का द्वितीय प्रस्थान है। भगवान् व्यास द्वारा रचित यह श्रीमद्भवद्गीता है। इसमें सात सौ (700) श्लोक हैं। भगवान् श्रीकृष्ण द्वारा 537 श्लोक निगदित हैं, अर्जुन द्वारा 122 श्लोक, संजय द्वारा 40 श्लोक और धृतराष्ट्र द्वारा एक श्लोक कहा गया है। गीताशास्त्र में भगवान् श्रीकृष्ण स्वयं ही वक्ता हैं, श्रोता तो अर्जुन है।

नि:श्रेयस परम पुरूषार्थ को उद्देश्य करके गीता शास्त्र के धर्म का उपदेश करता है- साक्षात् उपाय भूत निवृत्ति लक्षण धर्म है, और परम्परा से उपायभूत बुद्धियोग से युक्त प्रवृत्ति-लक्षण धर्म है। अभ्युदय का अर्थ, प्रवृत्ति, धर्म, कर्त्तव्य, बुद्धि, फलों से सन्धि, वर्जनरूप योग कौशल द्वारा अनुष्ठीयमान सत्व शुद्धि, सम्पादन द्वारा आत्म-अनात्म के विवेक ज्ञान में समाधि का पर्यावसान होता है। एवम् कर्मनिष्ठा द्वारा ज्ञान ज्ञाननिष्ठा और योग्यता प्राप्त कर कर्मसन्यास पूर्वक ज्ञाननिष्ठा सम्पादन रूप में निवृत्ति-लक्षण ध र्म द्वारा नि:श्रेयस की प्राप्ति होती है।

यही वेदान्तसार निगदित है। शंकराचार्य द्वारा उक्त है- ''तदिदं गीताशास्त्रं समस्तवेदार्थसारसंग्रहभूतं दुर्विज्ञेर्थाम्''। नि:श्रेयस ही यहाँ मुख्य प्रयोजन है। और शंकराचार्य द्वार उक्त है- ''गीताशास्त्रस्य संक्षेपत: प्रयोजनं परं नि:श्रेयसं सहेतुकस्य संसारस्य उत्यन्तोपरमलक्षणम्''।

6.2.1 गीता का माहात्म्य

''गीताशास्त्रमिदं पुण्यं यः पठेत् प्रयतः पुमान्।
विष्णोः पदमवाप्नोति भयशोकादिवर्जितः॥''

जो इस पवित्र गीताशास्त्र को पढ़ता है, उसके भय, शोक आदि चले जाते हैं। एवम् वह विष्णु धाम पद को प्राप्त करता है।

''गीताध्ययनशीलस्य प्राणायामपरस्य च।
नैव सन्ति हि पापानि पूर्वजन्मकृतानि च॥''

जो सर्वदा गीता का अध्ययन और प्राणायाम करता है, उसका इस जन्म में किया गया पापकर्म भी और पूर्व जन्म में किया गया पापकर्म नष्ट होता है।

श्रीमद्भगवत्गीता में अट्ठारह (18) अध्याय हैं। और वे अध्याय हैं-

अध्यायः	**अध्याय नाम**
प्रथम (एक)	अर्जुनविषादयोग
द्वितीय (दो)	सांख्ययोग
तृतीय (तीन)	कर्मयोग
चतुर्थ (चार)	ज्ञानकर्मसंन्यासयोग
पञ्च (पाँच)	कर्मसंन्यासयोग
षष्ठ (छः)	आत्मसंयमयोग
सप्त (सात)	ज्ञानविज्ञानयोग
अष्ठ (आठ)	अक्षरब्रह्मयोग
नव (नौ)	राजविद्याराजगुह्ययोग
दश (दस)	विभूतियोग
ग्यारह	विश्वरूपदर्शनयोग
बारह	भक्तियोग
तेरह	क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोग
चौदह	गुणत्रयविभागयोग
पन्द्रह	पुरूषोत्तमयोग
सोलह	दैवासुरसम्पद्विभागयोग
सत्रह	श्रद्धात्रयविभागयोग
अट्ठारह	मोक्षसन्न्यासयोग

टिप्पणी

6.2.2 गीता में प्रसिद्ध भगवान् के वचन

''नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्वदर्शिभिः॥'' (श्रीमद्भगद्गीता 2/16)

असत्पदार्थ कभी भी नहीं होता है, यथा-शश श्रृन्न आदि। सत् पदार्थ सदैव रहता है, यथा आत्मा। इन दोनों सत्-असत् पदार्थों का स्वरूप निर्णय केवल तत्वज्ञानियों का ही होता है, अन्य को नहीं।

आत्मा का स्वरूप

''न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥''
(गीता 2/20)

यह आत्मा कभी भी उत्पन्न नहीं होता और न मरता है, उत्पन्न होकर भी रहने वाला है ऐसा भी नहीं कह सकते, क्योंकि यह आत्मा जन्मरहित, सनातन तथा पुरातन है। शरीर के नष्ट होने पर भी वह नष्ट नहीं होता।

''वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरूषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम्॥'' (गीता 2/21)

यह आत्मा विनाशरहित, नित्य, जन्मरहित, और अपक्षय रहित है, ऐसा जो जानता है, वही ज्ञानी है। इस प्रकार का ज्ञानवान् पुरूष अन्य को कैसे मारता है। और अन्य को मारने के लिए कैसे प्रेरित करता है।

''वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही॥''
(गीता 2/22)

मनुष्य वस्त्र धारण करता है। परन्तु वह सर्वदा समान ही वस्त्र धारण नहीं करता। धारण किये गए वस्त्र जब पुराने हो जाते हैं, तब उन्हें छोड़कर नवीन अन्य वस्त्र धारण करता है। इस प्रकार आत्मा भी पुराने शरीर को त्याग कर नवीन अन्य शरीर का आश्रय लेता है।

''नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारूतः॥'' (गीता 2/23)

इस आत्मा को न काट सकते हैं, अग्नि इसे नहीं जला सकती है। जल इसे गला नहीं सकता है। वायु भी इसे सुखा नहीं सकता है।

''अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः॥'' (गीता 2/24)

यह आत्मा शस्त्र द्वारा किसी भी प्रकार से काटी नहीं जा सकती। अग्नि द्वारा भस्म भी नहीं किया जा सकता। इसको जल आदि के द्वारा भिगोया अथवा वायु द्वारा सुखाया नहीं जा सकता। यह सर्वदा रहता है। सर्वत्र भी रहता है। यह निश्चल, स्थिर और सनातन होता है।

योग का लक्षण-

''योगस्थः कुरू कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा धनञ्जय।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते॥'' (गीता 2/48)

हे अर्जुन अत्यन्त आसक्ति को त्याग कर लाभ-अलाभ के विषय में समान भाव से चिन्तन कर एकाग्र मन वाला होकर कर्मों में आचरण करो। लाभ-अलाभ के विषय में समान व्यवहार योग कहलाता है।

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम्॥ (गीता 2/50)

हे पार्थ ज्ञानमार्ग को समाश्रित करके व्यक्ति सुकर्म और दुष्कर्म को त्याग देता है। तुम भी वह त्याग दो। फल की अनपेक्षा वाले होकर कर्मों में संलग्न हो। कर्मों में कौशल ही योग कहलाता है।

स्थिरप्रज्ञ का लक्षण-

''दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरूच्यते॥'' (गीता 2/56)

स्थितप्रज्ञ का मन दुःखों में अनुद्विग्न होता है। वह सुखों में स्पृहवान् नहीं होता है। राग, भय और क्रोध से वह अतीत होता है।

''यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥'' (गीता 2/58)

इन्द्रियाँ सर्वदा शब्द आदि विषयों में प्रवृत्त होती हैं। कूर्म (कछुआ) जैसे भय से अपने अङ्गों को संकुचित कर लेता है तथा जब वह ज्ञाननिष्ठा में प्रवृत्त व्यक्ति सभी इन्द्रियों को शब्द आदि से संकुचित कर लेता है तब उसकी प्रज्ञा प्रतिष्ठित होती है। और वह स्थिरप्रज्ञ होता है।

''एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति॥'' (गीता 2/72)

हे पार्थ यह ब्राह्मी स्थिति कहलाती है। इस स्थिति को जो प्राप्त करता है, वह कदापि मोह वश नहीं होता है। अन्तकाल में भी इस स्थिति में स्थित होकर वह ब्रह्मानन्द को प्राप्त करता है।

टिप्पणी

''लोकेऽस्मिन् द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ।
ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम्॥'' (गीता 3/3)

हे अर्जुन सांख्यों के लिए ज्ञानमार्ग और योगियों के लिए कर्म मार्ग, यह दो प्रकार के मार्ग मेरे द्वारा प्रारम्भ में ही कहे गए हैं।

''न कर्मणामनारम्भान्नैष्कर्म्यं पुरूषोऽश्नुते।
न च संन्यसादेव सिद्धिं समधिगच्छति॥'' (गीता 3/4)

''न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्व प्रकृतिजैर्गुणैः॥'' (गीता 3/5)

जो कोई भी कभी भी क्षणकाल भी कर्मरहित होकर नहीं रहता है क्योंकि सभी प्रकृति से सम्भूत विकारों द्वारा विवश होकर कर्म प्रकरण में प्रवर्तित होते हैं।

सृष्टिक्रम-

''अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः॥'' (गीता 3/14)

प्राणी आहार से उत्पन्न होते हैं। आहार वृष्टि में होता है। और वृष्टि यज्ञ से होती है। यज्ञ तो कर्म द्वारा समुद्भूत होता है।

''कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम्।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्॥'' (गीता 3/15)

कर्म वेद से उत्पन्न होता हे। और वेद परमात्मा से उत्पन्न हो। अतः सर्वव्यापी भगवान् यज्ञ में सदा रहते हैं।

''प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः।
अहङ्कारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते॥'' (गीता 3/27)

देह, इन्द्रिय आदि सभी प्रकृति के विकारभूत हैं। वे ही कर्म करते हैं, आत्मा नहीं। यह आत्मा पुनः यदि प्रकृतिजन्य अहंकार से युक्त होता है तब मैं ही सभी कर्मों का कर्ता हूँ, ऐसा जानता है।

अवतारक्रम-

''यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥ (गीता 4/7)

हे अर्जुन! जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की अधिकता होती है तब मैं स्वयं को लोक के लिए प्रकाशित करूँगा। निराकार भी साकार हो जाएगा।

''परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥ (गीता 4/8)

सत्पुरूषों के संरक्षण के लिए, दुर्जनों के विनाश के लिए और धर्म की संस्थापना के लिए प्रत्येक युग में अवतरित होता हूँ।

मोक्षप्राप्ति -

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वत:।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥ (गीता 4/9)

हे अर्जुन! मेरा यह जन्म और कर्म है, ऐसा जो पुरूष यथार्थ को जानता है, वह शरीर त्याग करने पर पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं करता अपितु मुझे ही प्राप्त करता है।

चातुर्वर्ण्य-

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागश:।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्॥ (गीता 4/13)

गुणों और कर्मों के विभेद अनुसार ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र, चार वर्ण मेरे द्वारा किये गए। उस चार विभाग का यद्यपि मैं कर्ता हूँ तथापि मैं अकर्ता, और अनश्वर हूँ, यह जानो।

मुक्ति-

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्ग त्यक्त्वा करोति य:।
लिप्यतेन स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा॥'' (गीता 5/10)

जो पुरूष सभी कर्मों को ब्रह्म में अर्पित करके और आसक्ति को त्यागकर, स्वामी अर्थ को त्यागकर सेवक के समान कर्मों का आचरण करता है, वह कमल के पत्ते की भाँति सरोवर में वर्तमान हुए भी जल द्वारा जैसे लिप्त नहीं होता उसी प्रकार पाप द्वारा लिप्त नहीं होता।

योगियों का कर्म-

''कायेन मनसा बुद्धया केवलैरिन्द्रियैरपि।
योगिन: कर्म कुर्वन्ति सङ्ग त्यक्त्वात्मशुद्धये॥'' (5/11)

योगी शरीर, मनसा और बुद्धि द्वारा ईश्वर के लिए ही कर्म करते हैं, मेरे फल के लिए नहीं। ऐसे ममत्व बुद्धि के बिना इन्द्रियों द्वारा जो कर्म का आचरण करते हैं, उससे उनका चित्त शुद्ध होता है।

टिप्पणी

ज्ञान द्वारा मोक्ष-

''ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः।
तेषामादित्यज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्॥'' (गीता 5/16)

जिनका अज्ञान परमात्मा के ज्ञान द्वारा नष्ट होता है, उनका यह ज्ञान सूर्य यथा समस्त रूप में उत्पन्न को प्रकाशित करता है वैसे परमात्मा के अर्थ तत्व को प्रकाशित करता है।

''तदबुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः॥ (गीता 5/17)

जिनकी बुद्धि परमात्मा में स्थित है, चित्त उसमें ही विचरण करता है, स्थिति सर्वदा उसमें ही सम्भाव होती है, और तत्व को प्राप्त करके वह तत्परायण पुरूष उसी प्रकार के ज्ञान द्वारा कल्मष अर्थात् पाप को नष्ट करते है क्योंकि पुनरागमन नहीं होता है, इस प्रकार के मोक्ष को प्राप्त करते हैं। यथा श्रुतिप्रमाण भी है- ''न स पुनरावर्तते''। (छां.उ.)

संन्यासी का स्वरूप-

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स संन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः॥ (गीता 6/1)

जो कर्मफल की अनपेक्षा वाले होकर कर्म करता है, वह संन्यासी है, ऐसा कहते हैं। वह ही योगी भी है। अग्नि के त्याग मात्र द्वारा कोई भी व्यक्ति संन्यासी नहीं होता है। कर्मफल के त्याग मात्र द्वारा कोई भी व्यक्ति योगी भी नहीं होता। (अग्निरक्षण गृहस्थ का धर्म है। संन्यास आश्रम का स्वीकार करने के अवसर पर अग्नि का त्याग किया जाता है।)

''यं संन्याससमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव।
न ह्यसंन्यास्तसंकल्पो योगी भवति कश्चन॥'' (गीता 6/2)

श्रुति और स्मृति के वेत्ता जिसको संन्यास कहते हैं, उसको ही कर्मयोग मानते हैं। कहाँ से? जिसमें कर्म-संन्यास होता है उसमें कर्मफल विषयक अभिलाषा नहीं होती है, तथा जिसमें कर्म-योग होता है उसमें भी उसे कर्मफल विषयक अभिलाषा नहीं होती है। एवम् कर्मफल विषयक अभिलाषा को त्याग करके यहाँ दोनों के सद्भाव से और उनके सादृश्य से वे दोनों एक ही हैं, अनेक नहीं।

योगी का स्वरूप-

''ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकाञ्चनः॥'' (गीता 6/8)

गुरू द्वारा उपदिष्ट ज्ञान और प्रत्यक्ष अनुभव द्वारा जिसका चित्त प्रसन्न होता है, जो निर्विकार है और जो इन्द्रियों का वशीकर्ता है, जिसकी मिट्टी, पाषाण और स्वर्ण में समानबुद्धि होती है, उस प्रकार समाधि में मग्न योगी कहलाते हैं। (शास्त्रोक्त पदार्थों का ज्ञान परिज्ञान है। विज्ञान शास्त्र से ज्ञाताओं का वैसा ही स्वानुभाव विषयीकरण है।)

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धिकिल्बिषः।
अनेकजन्मसंद्धिस्ततो याति परां गतिम्॥ (गीता 8/45)

पूर्वोक्त प्रकार से यत्न द्वारा योग में पुनः पुनः प्रवर्तमान योगी के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। पाप रहित होकर वह बहुत जन्मों में शुद्ध होकर मुक्तिरूप परम गति को प्राप्त करता है।

''तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः।
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥'' (गीता 8/)

कृच्छ चान्द्रायण आदि रूप तप का आचरण करने वाले योगी अधिक है। शास्त्र में पण्डितों द्वारा भी योगी अधिक है। अग्निहोत्र आदि कर्म का आचरण आदि करने वाले योगी भी अधिक है। अतः हे अर्जुन तुम योगी बनो।

भगवान् श्रीकृष्ण का स्वरूप निर्णय

''भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इत्तीयं मे भिन्न प्रकृतिरष्टधा॥ (गीता 7/4)

पृथिवी, जल, तेज (अनल), वायु, खं (आकाश), मन बुद्धि और अहंकार ये आठ प्रकारों से भिन्न मेरी प्रकृति होती है।

''अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि में पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्॥ (गीता 7/5)

महाबाहो! आठ प्रकार से विभक्त यह मेरी प्रकृति संसारबन्धनात्मिका है। इसके अन्य भी मेरी प्रकृति है। वह ही प्रकृष्ट रूप से सभी की प्राणधारी है। उसके द्वारा ही यह जगत् धारण किया जाता है।

''एतद्योनति भूतानि सर्वाणीत्युपधारम।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा॥ (गीता 7/6)

सभी भूत प्रकृति से सम्भव है, ऐसा जानो। यह समग्र जगत् मुझसे ही निकलता है, मुझमें ही लीन हो जाता है।

ब्रह्म का स्वरूप निर्णय-

''अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः॥ (गीता 8/3)

अत्युत्तम, विनाशरहित और सर्वव्यापक ब्रह्म कहा जाता है। उस प्रकार के ब्रह्म का जीव रूप शरीर में अवस्थान अध्यात्म कहलाता है। सभी भूतों की उत्पत्ति और वृद्धि में कारणभूत यज्ञः (देवत के उद्देश से चरूपुरोडाश आदि में द्रव का विसर्जन) कर्म कहा जाता है।

''ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्॥ (गीता 8/13)

सभी प्रवेश द्वारों (नवद्वार) को बन्ध करके चित्त को हृदय में संस्थापित करके और अपने प्राण को स्थापित करके समाधि को प्राप्त एकाक्षर ब्रह्मवाचक होने के कारण साक्षात् ब्रह्मस्वरूप ओंकार का उच्चारण करके मुझे ध्यान करते हुए जो मानव शरीर को छोड़ता है, वह उत्कृष्ट गति को प्राप्त करता है।

गुणत्रय-

''तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ॥'' (गीता 14/6)

हे पापरहित अर्जुन उन तीन गुणों में स्वच्छ होने के कारण प्रकाशक निरूपद्रव सत्व सुख और ज्ञान को उत्पन्न करता है।

''रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भ्दवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम्॥ (गीता 14/7)

अर्जुन अप्राप्त वस्तु में अभिलाषा तृष्णा, प्राप्त वस्तु में अभिलाषा आसक्ति है। इनमें जो राग सम्भव होता है, वह यह रजोगुण है। और यह आत्मा कर्मों में प्रवृत्त होता है। और वह प्रवृत्त होकर उसमें बन्ध जाता है।

''तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत॥'' (गीता 14/8)

अर्जुन जो तृतीय गुण तम है वह अज्ञान से उत्पन्न होता है। और यह तमस् सभी प्राणियों की भ्रान्ति को उत्पन्न करता है। इस गुण के द्वारा सभी के अनवधान, जड़ता और निद्रा उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार यह तम पुरूष को संसार में बाँधता है।

दो प्रकार के लोक-

''द्वाविमौ पुरूषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते॥'' (गीता 15/16)

इस लोक में क्षर और अक्षर दो पुरूष होते हैं। उसमें से क्षर पुरूष नाम, महवत् आदि भूतों से युक्त सभी कार्यरूप राशि है। और वह विनाशी है। अक्षर माया शब्द से जो व्यवह्यत है वह प्रकृति है। यह निर्विकार द्वारा स्थित कारणभाग है।

असुरस्वभाव-

''प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः।
न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते॥'' (गीता 16/7)

असुर गुण सम्पन्न लोग धर्म में प्रवृत्ति को नहीं जानते हैं और अधर्म से निवृत्ति को। कायिक, वाचिक और मानसिक जो त्रिविध शौच (शुचि) है, वह उनमें सुभव नहीं होता है। यथार्थवादित्व भी नहीं।

त्रिविध-श्रद्धा-

''सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरूषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः॥'' (गीता 17/6)

सात्विक, राजसी और तामसी तीन प्रकार की श्रद्धा होती है। अब उनके स्वरूप को कहते हैं-

यजन्ते सात्विका देवान्यक्षर क्षांसि राजसाः।
प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये यजन्ते तामसा जनाः॥ (गीता 17/4)

वहाँ जिनमें सत्व होता है वे देवों को पूजते है॥ जिनमें रजस होता है, वे यक्षों और राक्षसों को पूजते हैं। जिनमें पुनः तमस् होता है, वे प्रेतों और भूतों को पूजते हैं।

पाठगत प्रश्न 6.2

1. गीता में कितने अध्याय हैं?
2. श्रीमद्भगवद्गीता में किसने किसको उपदेश दिया?
3. श्रीमद्भगवद्गीता को किसने रचा?
4. श्रीमद्भगवद्गीता में कितने श्लोक हैं?
5. श्रीमद्भगवद्गीता के अट्ठारह अध्यायों के नाम क्या हैं?
6. आत्मा नित्य है अथवा अनित्य?
7. योग का एक लक्षण लिखिए।
8. स्थित प्रज्ञ का एक लक्षण लिखिए।
9. चातुर्वर्ण्य किससे उत्पन्न हुए?
10. प्रकृति कितने प्रकार की है? और वे क्या हैं?

11. विश्वरूप दर्शन गीता में किस अध्याय में है?
12. अक्षर पद द्वारा ब्रह्म कहलाता है अथवा जीव?
13. तीन गुण क्या हैं?
14. अग्नि किसको जलाने में समर्थ नहीं है?
15. संन्यासी का स्वरूप क्या है?
16. ''न स पुनरावर्तते'' कहाँ है?
17. प्राणी किससे उत्पन्न होते हैं?
18. चार वर्ण कौन से हैं?
19. महाभारत के किस पर्व में श्रीमद्भगवद्गीता अन्तर्भूत है?
20. वे दो प्रकार के धर्म के लक्षण कौन हैं?
21. ज्ञान के द्वारा मोक्ष कैसे होता है?

पाठसार

महर्षि बादरायण ने ब्रह्मसूत्र की रचना की। शारीरिक अथवा जीवात्मा का जो स्वरूप उपनिषदों में सुना गया है वही नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव वाले ब्रह्म को प्रस्थान में उपनिषद्वाक्य विषयीकृत करके विचार करते हैं।

उसमें चार अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। वहाँ पर परम अधिकरण का लक्षण कहकर सूत्र का लक्षण भी कहा गया है।

ब्रह्मसूत्र प्रथम अध्याय के प्रथम पाद में प्रसिद्ध विषय चतुः सूत्री है। उसमें चार सूत्रों की चर्चा की गई है। जन्माद्यधिकरण के भाष्य में ब्रह्म के दो लक्षण भी व्याख्यात है। शास्त्रयोनित्वात् इत्यादि सूत्र द्वारा ब्रह्म का शास्त्रप्रमाणकत्व भी स्थापित है।

उस पर परम् पादों का सार व्याख्यात है। ब्रह्मसूत्र में निर्दिष्ट आचार्य सूत्रप्रमाण के साथ लिखे गए हैं। स्मृति प्रस्थान को गीता प्रस्थान कहते हैं। महाभारत के शान्तिपर्व में अन्तर्भूत श्रीमद्भगवद्गीता परमपुरूष वासुदेव द्वारा द्वापर में कुरूक्षेत्र में अर्जुन को समुपदिष्ट कृष्णद्वैपायन व्यास द्वारा सात सौ श्लोकों में उपनिबद्ध है। श्रुति में प्रतिपादित अर्थ ही स्मृति प्रस्थान में आलोचित है। गीता में प्रवृत्ति लक्षण और निवृत्ति धर्म को व्याख्यायित किया गया है। आत्मा में स्वरूप निर्णय किया गया है। वहाँ परम् स्थित प्रज्ञ का लक्षण भी किया गया है। सृष्टिक्रम भी व्याख्यायित हैं।

भगवान् का अवतार कब होता है, उसकी भी आलोचना ''यदा यदा हि धर्मस्य'' इत्यादि

श्लोक द्वारा की गई है। चारों वर्णों का स्वरूप निर्णय किया गया है। योगियों के भी कर्म कहकर उनका स्वरूप निर्णय किया गया हैं

संन्यासियों के स्वरूप को कहकर (बताकर) ब्रह्म के भी स्व रूप का विचार किया गया है। वहाँ पर तीन गुण व्याख्यायित हैं। और भी, दो प्रकार के लोकों की व्याख्या तथा तीन प्रकार की श्रद्धा व्याख्यायित हैं न्याय प्रस्थान और स्मृति प्रस्थान से ब्रह्म को स्वरूप को ही जाना जाता हैं ब्रह्म की प्राप्ति होती है अर्थात् मोक्ष होता है। तब इस माया मोह विशिष्ट संसार में पुनः आगमन नहीं होता। तब वह जीवनमुक्त होता है। ब्रह्ममीमांसा ही वेदान्त शास्त्र है। और ब्रह्म उपनिषद् में प्रसिद्ध है। वह स्वरूप एवं विचार रूप में वेदान्तशास्त्र एवं उपनिषद्, गीता, ब्रह्मसूत्र रूप प्रस्थानत्रयी में रहता है। ब्रह्म जिज्ञासुओं के लिए प्रस्थानत्रयी ही विशेषतः अध्ययन एवं विचार के योग्य है।

पाठान्त प्रश्न

1. न्याय प्रस्थान के विषय में प्रबन्ध लिखिए।
2. गीता प्रस्थान के विषय में प्रबन्ध लिखिए।
3. ब्रह्मसूत्र के चारों अध्यायों का परिचय दीजिए।
4. ब्रह्म के दो प्रकार के लक्षण लिखिए।
5. गीता में योग के स्वरूप का वर्णन कीजिए।
6. गीता में आत्मा के स्वरूप का विचार कीजिए।
7. ब्रह्मसूत्र में निर्दिष्ट आचार्यों के नाम प्रमाण के साथ लिखिए।
8. स्थितप्रज्ञ के लक्षण पर विस्तार से विचार कीजिए।
9. ब्रह्म के स्वरूप को न्याय-स्मृति प्रस्थान द्वारा विचार कीजिए।
10. गुणत्रय और असुरों के स्वभाव पर विचार कीजिए।
11. भगवान् श्रीकृष्ण का स्वरूप निर्णय कीजिए।
12. गीता के अध्यायों के नाम लिखकर 'तत्तु समन्वयात्' सूत्र की व्याख्या कीजिए।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-6.1

1. न्याय प्रस्थान द्वारा ब्रह्मसूत्र का ग्रहण होता है।

टिप्पणी

2. ब्रह्मसूत्र को महर्षि बादरायण ने रचा।
3. ब्रह्मसूत्र में चार अध्याय हैं।
4. ब्रह्मसूत्र में एक सौ पञ्चानवें (195) अधिकरण हैं।
5. ब्रह्मसूत्र के द्वितीय अध्याय का नाम अविरोध अध्याय है।
6. ब्रह्म का लक्षण 'जन्माद्यस्य यत:'' इस सूत्र में प्रतिपादित है।
7. ब्रह्मभाव मोक्ष है।
8. साधन अध्याय के प्रथम पाद में जीव की गत्यागति वैराग्य हेतु प्रदर्शित होती है।
9. अशरीराख्य मोक्ष है उसमें श्रुतिप्रमाण है- ''अशरीरं शरीरेष्वनवस्थेष्वस्थितम्। महान्तं विभुमात्मानं मत्वा धीरो न शोचति।''
10. 'जन्माद्यस्य यत:' इसमें यत: पद का अर्थ कारणत्व है।
11. शास्त्रयोनित्वात् इस सूत्र में दो प्रकार का विग्रह होता है- शास्त्र योनि अर्थात् प्रमाण है जिसमें, उसका भाव शास्त्रयोनि उसके कारण शास्त्रयोनित्वात्। अपर विग्रह होता है- शास्त्र का योनि अर्थात् कारण, उसका शास्त्रयोनित्व, उसके कारण शास्त्रयोनित्वात्।
12. ब्रह्मजिज्ञासा इसमें विग्रह होता है 'ब्रह्म की जिज्ञासा'। ब्रह्म में कर्मणि षष्ठी होती है, शेषे षष्ठी नहीं।
13. सूत्र का लक्षण है- ''अल्पाक्षरमसंदिग्धं सारद्विश्वतोमुखम्। अस्तोभमनवद्यं च सूत्रं सूत्रविदो विदु:।।''
14. अधिकरण का लक्षण है- ''विषयो विशयश्चैव पूर्वपक्षस्तथोत्तम्। सन्नतिश्चेति पञ्चान्न शास्त्रेऽधिकरणं स्मृतम्।।''
15. बादरायण आचार्य द्वारा ब्रह्मसूत्र में निर्दिष्ट चार आचार्यों के नाम हैं- काष्णाजिनि, काशकृत्स्नाचार्य, औडूलोमि और आत्रेय।
16. उत्क्रान्तिगति फलाध्याय के द्वितीय पाद में वर्णित है।
17. सांख्य आदि का दुष्टत्व को अविरोध अध्याय के प्रथम पाद में निराकृत किया गया है।
18. ''अस्य महतो भूतस्य नि:वासितमेतद् यदृग्वेद:'' बृहदारण्योपनिषद् में है।
19. ''प्रतिष्ठन्ते परम्परया व्यवहरन्ति येन मार्गेण तत्प्रस्थानम्'' यह उक्ति लोचनकार अभिनवगुप्तपाद की है।
20. तटस्थलक्षण का लक्षण है- यावल्लक्ष्यकालमनवस्थितत्वे सति यत् व्यावर्तकं तदेव तटस्थलक्षणम्।

टिप्पणी

21. तत्तु समन्वयात् इस सूत्र में तत् पद द्वारा ब्रह्म का ग्रहण होता है।

22. वेदान्तवाक्यकुयुमग्रथनार्थत्वात् सूत्राणाम्। वेदान्तवाक्यानि हि सूत्रैरूदाहृत्य विचार्यन्ते।।'' जन्माद्यधिकरण भाष्य में है।

23. अविरोध अध्याय में तृतीय पाद वियत्पाद है।

24. इस सूत्र में ब्रह्म जिज्ञासा, यह अर्थ प्रतिपादित है। 'अथ' शब्द आनन्तर्यार्थ अर्थ में गृहीत है। 'अतः' शब्द हेतु अर्थ में गृहीत है। ब्रह्मजिज्ञासा, यहाँ ब्रह्म की जिज्ञासा है। ब्रह्म में कर्मणि षष्ठी है, शेषे षष्ठी नहीं।

उत्तर-6.2

1. गीता में अट्ठारह अध्याय हैं।

2. श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण अर्जुन को उपदेश दिया।

3. श्रीमद्भगवद्गीता को महर्षि वेदव्यास ने रचा।

4. श्रीमद्भगद्गीता में सात सौ (700) श्लोक हैं।

5. श्रीमद्भगवद्गीता के अट्ठारहवें अध्याय का नाम ''मोक्षसंन्यासयोग'' है।

6. आत्मा नित्य है।

7. योग का एक लक्षण है- ''योगस्थ कुरू कर्माणि सन्न त्यक्त्वा धनञ्जय। सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।''

8. स्थितप्रज्ञ का एक लक्षण होता है- ''यदा संहरते चायं कूर्मोऽन्नानीव सर्वशः। इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।''

9. गुणकर्म के विभाग से चार वर्ण उत्पन्न हुए।

10. प्रकृति आठ प्रकार की होती है। और वे हैं- पृथिवी, जल, अनल (अग्नि), वायु, खं (आकाश), मन, बुद्धि और अहयार।

11. विश्वरूप दर्शन गीता में ग्यारहवें अध्याय में है।

12. अक्षर पद द्वारा ब्रह्म को बताया गया है, न कि जीव को।

13. तीन गुण हैं- सत्व, रजस्, तसम्।

14. अग्नि आत्मा को नहीं जला सकती है।

15. संन्यासी स्वरूप है- अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः। स संन्यासी च योगी च न निरग्निं चक्रियः।।

16. ''न स पुनरावर्तते'' यह मन्त्र छान्दोग्योपनिषद् में है।

17. प्राणीजन आहार से उत्पन्न होते हैं।

18. चार वर्ण होते हैं- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र।

19. महाभारत के शान्तिपर्व में श्रीमद्भगवद्गीता अन्तर्भूत है।

20. दो प्रकार के धर्म लक्षण और वे हैं- प्रवृत्ति लक्षण धर्म और निवृत्ति लक्षण धर्म।

21. ज्ञान द्वारा मोक्ष होता है, उसमें में यह भगवान् का वचन प्रमाण होता है- ''ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः। तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम्।।

।।षष्ठ पाठ समाप्त।।